जिसने बदली दिशा जगत् की,
धरती और आकाश की ।
जय बोलो ऋषि दयानन्द की,
जय सत्यार्थ प्रकाश की ।।

।। ओ३म् ।।

वर्ष - ६० अंक - ६
मूल्य : एक प्रति १० रुपये
वार्षिक : १००) रु०
आजीवन - १०००) रु०
प्रतिमास ता० १३ को प्रकाशित

आर्य-संसार

ज्येष्ठ-आषाढ़: सम्वत् २०७५ वि० जून – २०१८

श्री गोविन्दराम हासानन्दजी
(विवरण पृष्ठ २१ पर)

आर्य समाज कलकत्ता की गतिविधियाँ

नि:शुल्क न्युरो एवं मानसिक रोग परामर्श शिविर

रविवार, २६ मई २०१८ को साप्ताहिक सत्संग के उपरान्त आर्यसमाज कलकत्ता के औषधालय में डा० (मेजर) आनन्द मिश्र (रिटा०) द्वारा मानसिक रोग, डिप्रेशन तथा नस नाड़ियों से सम्बन्धित रोगों के उपचार हेतु एक शिविर आयोजित हुआ जिसमें २६ व्यक्ति अपना परीक्षण कराकर लाभान्वित हुए। यह कार्यक्रम आर्यसमाज कलकत्ता के युवा एवं उत्साही सदस्य श्री विवेक जायसवाल जी के विशेष प्रयत्न से आयोजित किया गया।

साधारण सभा का वार्षिक अधिवेशन

आर्य समाज कलकत्ता की साधारण सभा का वार्षिक अधिवेशन रविवार दिनांक १५.०७.२०१८ को प्रातः १०.३० बजे से आर्य समाज मन्दिर, १९ विधान सरणी, कोलकाता-६ के सभागार में होगा।

सभी सदस्यों की उपस्थिति सादर प्रार्थनीय है।

विचारणीय विषय :-

१. गत साधारण सभा के अधिवेशन की कार्यवाही की सम्पुष्टि।
२. आर्यसमाज कलकत्ता तथा सम्बन्धित विभागों — आर्य महिला शिक्षा मण्डल ट्रस्ट, आर्य कन्या महाविद्यालय, महर्षि दयानन्द एकेडेमिक विद्यालय, रघुमल आर्य विद्यालय, आर्य स्त्री समाज कलकत्ता, आर्य युवा शाखा, आर्य विद्यालय ट्रस्ट, वैदिक अनुसंधान ट्रस्ट आदि के वार्षिक विवरण और आय-व्यय लेखा सुनना।
३. अन्तरंग सभा द्वारा स्वीकृत प्रस्तावों पर विचार।
४. वर्ष २०१७-२०१८ का हिसाब पास करना।
५. आगामी वर्ष के लिए पदाधिकारियों व अन्तरंग सभा के सदस्यों का निर्वाचन।
६. आगामी वर्ष के आनुमानिक आय-व्यय बजट की स्वीकृति।
७. विविध विषय - प्रधान जी की अनुमति से।

नोट : जिन सदस्यों की उपस्थिति १३ से न्यून है तथा जिन्होंने सदस्यता शुल्क मार्च २०१८ तक का नहीं दिया है, वे मतदान के अधिकारी नहीं होंगे। अन्तरंग सभा का सदस्य तथा अधिकारी निर्वाचित होने के लिए १८ उपस्थिति की आवश्यकता है। निर्वाचन में भाग लेने वाले सदस्यों के सदस्यता शुल्क देने की अन्तिम तिथि ०१.०७.२०१८ है।

दीपक आर्य
मंत्री

शोक प्रस्ताव

१. आर्य समाज के निष्ठावान व समर्पित कर्यकर्ता फूलपुर (टाण्डा) अम्बेडकरनगर निवासी श्री राम नारायण सैनी का सड़क दुर्घटना में २९ अप्रैल २०१८ को असामयिक निधन हो गया है। आपकी आयु लगभग ६० वर्ष थी। आप प्रारंभ से ही आर्यसमाज के प्रचार-प्रसार में संलग्न थे। अपने क्षेत्र में आर्यसमाजों के वार्षिकोत्सव में सक्रिय भूमिका निभाते हुए भी अपने वैयक्तिक स्तर पर भी उत्सवों का स्वयं आयोजन करते थे। आर्यसमाज ऐसे निष्ठावान व सक्रिय कार्यकर्ता के न रहने से अत्यन्त मर्माहत है।

शेषांश पृष्ठ २८ पर

ओ३म्

आर्य-संसार

वर्ष ६० अंक — ६
ज्येष्ठ-आषाढ़ - २०७५ वि०
दयानन्दाब्द - १९४
सृष्टि सं० - १,९६,०८,५३,११९
जून — २०१८

आद्य सम्पादक
प्रो० उमाकान्त उपाध्याय
(स्मृति शेष)

●

सम्पादक :
श्री राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल

सहयोगी संपादक :
श्रीमती सरोजिनी शुक्ला
श्री सत्यप्रकाश जायसवाल
पं० योगेशराज उपाध्याय

●

शुल्क : एक प्रति १० रुपये
वार्षिक : १०० रुपये
आजीवन : १००० रुपये

इस अंक की प्रस्तुति

१. आर्य समाज कलकत्ता की गतिविधियाँ		२
२. इस अंक की प्रस्तुति		३
३. सत्य, यश, श्री मुझमें बसें (६४)	वेद-वीथिका से	४
४. स्वामी जी का स्वकथित जीवन-चरित्र	पं० लेखराम द्वारा संकलित	७
५. सत्यार्थ प्रकाश काव्य-सुधा महर्षि दयानन्द कृत सत्यार्थ प्रकाश का काव्यानुवाद	पं. देवनारायण तिवारी 'निर्भीक'	१०
६. वेद में प्रसन्नता के उपाय	डा० अशोक आर्य	१२
७. ऊर्ध्वरिता लक्ष्मण: एक भव्य चरित्र	श्री परीक्षित मंडल 'प्रेमी'	१५
८. ''महर्षि देवदयानन्द एक सच्चे गुरु थे''	श्री खुशहाल चन्द्र आर्य	१९
९. श्री गोविन्दराम हासानन्द जी		२१
१०. महाभारत काल के बाद महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने ही सत्य ईश्वर की अनुभूति करायी	पं० उम्मेद सिंह विशारद	२६

आर्य समाज कलकत्ता

१९, विधान सरणी, कोलकाता-७०० ००६

दूरभाष : २२४१-३४३९　　***email : aryasamajkolkata@gmail.com***

'आर्य संसार' में प्रकाशित लेखों का उत्तरदायित्व सम्बन्धित लेखकों पर है ।
किसी भी विवाद की स्थिति में न्याय क्षेत्र कोलकाता ही होगा ।

सत्य, यश, श्री मुझमें बसें

मनसः काममाकूतिं वाचः सत्यमशीय ।
पशूनां रूपमन्नस्य रसो यशः श्रीः श्रयतां मयि स्वाहा ।।

यजु० ३९--४

शब्दार्थ :-

मनसः	=	मन की
कामम्	=	इच्छा शक्ति को
आकूतिम्	=	संकल्प शक्ति को
वाचः	=	वाणी के
सत्यम्	=	सत्य को
अशीय	=	प्राप्त करूँ
पशुनांरूपम्	=	पशुओं का रूप
अन्नस्य रसः	=	अन्न का रस
यशः श्रीः	=	यश और श्री
श्रयताम्	=	सुशोभित हों
मयि	=	मुझमें
स्वाहा	=	आहुति देता हूँ, सत्कार्य करता हूँ

भावार्थ :-मैं मन की इच्छा शक्ति, संकल्प शक्ति और वाणी के सत्य को प्राप्त करूँ । पशुओं का रूप, अन्न का रस, सत्य, यश, श्री, मेरे सत्कार्यों से मुझमें सुशोभित हों ।

विचार विन्दु :

१. मन वाणी कर्म से सत्य की प्राप्ति कैसे ?
२. संकल्प शक्ति की महिमा ।
३. पशु एवं अन्न से रूप रस का ग्रहण ।
४. सत्य, यश, श्री की प्राप्ति कैसे ?

व्याख्या

इस मंत्र में मनुष्य जीवन को उत्कृष्ट बनाने का सूत्र निहित है । मंत्र में प्रार्थना की गई है कि हमारे जीवन में सत्य, यश और श्री बड़े आनन्द से निवास करें ।

मंत्र में कहा गया है कि मेरे मन में जो कामना, जो संकल्प उदय हो, उनकी पूर्ति हो । वस्तुतः बिना कामना के कोई कार्य नहीं होगा —

'अकामस्य क्रिया काचित् दृश्यते नैव कर्हिचित्' ।

संसार में बिना कामना के कोई कार्य नहीं किया जाता । अच्छे से अच्छा शुभ कर्म हो, उसके लिए कामना चाहिए ही । इसी तरह कोई भी कार्य बिना संकल्प के पूरा नहीं होता । वस्तुतः संकल्प का अर्थ ही है कि अपने साधनों को, सुविधाओं को अच्छी तरह तैयार करके काम में जुट जाना । मनुष्य का सत्य- संकल्प, दृढ़-निश्चय उसके जीवन का कल्प-वृक्ष है । मनुष्य के जीवन में यदि शुभ-कामनाएं और शुभ-संकल्प बना रहे तो मनुष्य का जीवन सदा सफल ही होता है । श्रीराम महर्षि विश्वामित्र के यज्ञ में, महर्षि के यज्ञ की रक्षा के लिए गये थे । उन्होंने यज्ञ की रक्षा की । किन्तु जंगल में उन्होंने ऋषि-मुनियों की हड्डियों का अम्बार देखा और क्षत्रिय-धर्म का स्मरण करके अपना संकल्प, अपनी कामना प्रकट की —

'निश्चरहीन करौं महि, भुज उठाय प्रन कीन्ह ।'

जो भी मनुष्य कोई श्रेष्ठ कार्य करता है वह अपने संकल्प और अपनी कामना को दृढ़ रखता है।

मंत्र में कहा गया है कि मेरी वाणी में सत्य का निवास हो, मैं सत्य को प्राप्त करू । कहते हैं सत्य से बढ़कर कोई धर्म नहीं ह-'नहि सत्यात् परोधर्मः' । सत्य सबसे बढ़कर धर्म है । जिसके जीवन में असत्य आता है उसका जीवन बदनाम हो जाता है । राजा दशरथ अपनी सत्य-प्रतिज्ञा से अमर हो गये । पितामह भीष्म ने अपने पिता के सुख के लिए सत्य प्रतिज्ञा की । स्वामी दयानन्द ने आर्य-समाज का एक नियम ही बना दिया —

'सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सदा उद्यत रहना चाहिए ।'

अतः मंत्र में प्रार्थना है कि जगदीश्वर ! मेरी वाणी में सत्य की प्राप्ति हो ।

मंत्र में प्रार्थना है कि मुझे पशुओं से उनके रूप की शिक्षा मिले । पशुओं में भेड़, बकरी, गाय, घोड़े मुख्य हैं । गाय ब्राह्मण की तरह है । सरल सात्विक स्वरूप किन्तु दूध में अमृत की वर्षा। ब्राह्मण भी अरण्य में कन्द-मूल का सेवन, स्वाध्याय सरल सात्विक जीवन, किन्तु उपदेश में मनुष्यों के कल्याण की अमृत-वर्षा करता रहे । अश्व क्षत्रिय का प्रतीक है । अश्व का अर्थ हुआ - अ + श्व (कल) ।

अर्थात् अश्व माने आज, अभी कल नहीं, किसी काम को उधार नहीं, तुरन्त कार्य सम्पन्न करें । अवि, भेड़ ऊन देती है और ऊन से सबका आच्छादन करती है। नीचे निगाहें भेड़ की रहती है और वह संघ - शक्ति का प्रतीक है । अज, बकरी, पत्तियां खाती है । साल में एकाधिक बार प्रजनन और दूध में अमृत वर्षण करती रहती हैं । मंत्र में कहते हैं कि मनुष्य इन पशुओं से शिक्षा लेता रहे ।

ब्राह्मण की गाय ब्राह्मण की वाणी है । ब्राह्मण का जीवन सीधा सादा सरल, तपस्वी होना चाहिए। किन्तु ब्राह्मण के उपदेश में अमृत जैसा कल्याण होना चाहिए ।

अश्व का अर्थ है - 'आशु गच्छति' - गति में शीघ्रता हो, गतिशील, प्रगतिशीलता क्षत्रिय में होनी चाहिए । युद्ध हो या शासन सुव्यवस्था, सब जगह शीघ्रता और प्रगति आवश्यक है । अश्व को विश्राम नहीं चाहिए । शासन में भी विश्राम और आलस्य नहीं होना चाहिए । मनुष्य समाज में भेड़ों की संघ शक्ति और बकरी की प्रचुर उत्पादन शक्ति होनी चाहिए । यह है 'पशुनां रूपम्' का सन्देश ।

मंत्र में अन्तिम बात यह कही कि हममें तीन विशेषतायें आनन्द से शोभायमान हो — (१) सत्य (२) यश और (३) श्री ।

सत्य ब्राह्मण का धर्म है । ब्राह्मण को यश मिले, न मिले, कोई चिन्ता नहीं । श्री मिले न मिले, उसकी भी चिन्ता नहीं, किन्तु उसके जीवन में सत्य बना रहे । इसी तरह क्षत्रिय न्याय का प्रतीक है। क्षत्रिय के यश की रक्षा होनी ही चाहिए । जो दूसरों की रक्षा करेगा उसके जीवन में यश अवश्य आयेगा । इसी तरह श्री वैश्य का धन है । सब धन को 'श्री' नहीं कहते । 'श्री' वह धन है जिसमें दूसरों को आश्रय मिले । जिनके धन में दूसरों को आश्रय नहीं मिलता वे धनवान हो सकते ह, बलवान् भी हो सकते हैं, विद्वान् भी हो सकते हैं किन्तु श्रीमान् नहीं होंगे । यही भाव आचमन मंत्रों में इस प्रकार कहा गया है -

(१) अमृतोऽपस्तरणमसि- हमारे जीवन में अमृत का बिछौना हो ।

(२) अमृताऽपिधानमसि - हमारे जीवन में अमृत का ओढ़ना हो ।

(३) सत्यं यशः श्रीः मयि श्रीः श्रयताम् ।

हमारे जीवन में सत्य, यश और श्री पूरी शोभा से आश्रयदाता होकर विराजें ।

मंत्र में इसीलिए प्रार्थना की गई है कि प्रभो ! मेरे मन की कामनायें और संकल्प पूर्ण हों, मेरी वाणी में सत्य आवे और मैं पशुओं से, उनके रूप से शिक्षा लेकर अपने जीवन में आपकी कृपा से सत्य, यश और श्री का आश्रय पा सकूँ ।

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का जीवन वृत्त

अध्याय– १

पुष्कर के मेले का वृत्तान्त

महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती का जन्म फाल्गुन कृष्ण पक्ष दशमी को गुजरात में सम्वत् १८८१ में हुआ था । पूरे भारतवर्ष में स्वामी जी का जन्म दिवस मनाया जाता है । इसी अवसर पर आर्य समाज कलकत्ता ने निर्णय किया कि पं० लेखराम द्वारा संकलित एवं आर्य महामहोपदेशक कविराज श्री रघुनन्दन सिंह निर्मल द्वारा अनूदित महर्षि स्वामी दयानन्द का जीवन चरित्र धारावाहिक प्रकाशित किया जाय, इसी श्रृंखला में प्रस्तुत है यह धारावाहिक जीवन-चरित्र — सम्पादक

(गतांक से आगे)

अध्याय - २

गंगा नदी के तट पर सात वर्ष का जीवन

(फाल्गुन शुदी १, सं० १९२३ से स० १९३० तदनुसार १२ मार्च, १८६७ से सन् १८७३ ई० तक)

अभ्यस्त अपराधी भी योगी से डर गये

राव कर्णसिंह का नीच इरादा, कई व्यक्तियों की साक्षी - एक रात को राव कर्णसिंह ने दो बजे के समय तीन मनुष्यों को अपनी तलवार देकर भेजा कि तुम जाकर स्वामी जी का सिर काट लाओ । यह लोग गये परन्तु कुटी में भीतर जाने का साहस न पड़ा । स्वामी जी उस समय सोते थे और कैथलसिंह भी सोता था । स्वामी जी खड़का सुनकर बैठकर गये । वह लोग लौटकर पहुँचे कि हमारा साहस नहीं पड़ता । जहाँ राव साहब उतरे हुए थे वह स्थान स्वामी जी से लगभग १२५ पग दूर था । राव साहब ने फिर उनसे कहा कि तुम जाओ और उसे मारो और बहुत धमकाया । यह शब्द सम्भवत: स्वामी जी ने सुने । स्वामी जी ध्यानावस्थित होकर चौकी पर बैठ गये । वे लोग फिर आये । इस बार भी धीरज खो बैठे और साहस न कर सके तथा वापस लौट गये । इस पर राव साहब ने गालियाँ देकर उनको फिर भेजा । वंह तीसरी बार आये और हाथ में तलवार लिये कुटी के भीतर जाने को नीचे से चढ़े और यह कहते हुए कि कौन है इस कुटी में? स्वामी जी ने चौकी से उठकर कुटी के द्वार पर खड़े होकर उच्च स्वर से 'हूँ' की ध्वनि की । इस

ध्वनि को और फिर स्वामीजी के स्वर को सुनकर वे ऐसे घबराये कि उल्टे होकर गिर पड़े और तलवार छूट गई । अन्त में बड़ी कठिनता से संभल कर भाग गये । इस अवसर पर ठाकुर कैथलसिंह भी जाग पड़ा और उसने इस कौतुक को देखा । वह भय के मारे उसी समय भागकर ग्राम में आया । स्वामी जी उसे रोकते रहे कि तू कहीं मत जा परन्तु वह न माना, तत्काल आकर ठाकुरों को सूचना दी । उस समय रात्रि लगभग चार घड़ी शेष रह गई थी । ठाकुर गोपालसिंह जी के भ्राता ठाकुर कृष्णसिंह जी को जगाकर सब घटना सुनाई । ठाकुर जी तत्काल लट्ठ लेकर चल पड़े और अपनी प्रात:काल के अग्निहोत्र की सामग्री भी लेते गये और दो तीन पुरुषों को भी साथ ले गये । उनके पीछे ठाकुर रघुनन्दनसिंह जी दौड़े । सारांश यह कि बस्ती के बहुत से क्षत्रिय लोग गये और पीछे ठाकुर गोपाल सिंह जी भी पहुँच गये और मैं भी गया । उनके जाते ही सबसे प्रथम ठाकुर किशनसिंह ने राव कर्णसिंह को उच्च स्वर से गालियाँ देनी आरम्भ की और कहा कि यदि बहुत वीर और वास्तव में क्षत्रिय की संतान हो तो अब हमारे सामने हथियार बाँध कर आओ, देखो तुम्हारी बन्दूक और तलवार एक थप्पड़ में छीनते है या नहीं । और भी बहुत कठोर शब्द कहे । उन सिपाहियों के गिरने के चिन्ह भी वहाँ पाये गये । जब ये लोग पहुँचे तो स्वामी जी ने ठाकुर किशनसिंह से कहा कि तुम सन्तोष करो; यह तो स्वयमेव भीरु है। तुम क्रोध मत करो, ये लोग हमारा कुछ नहीं कर सकते । परन्तु ठाकुर किशनसिंह का क्रोध शान्त नहीं हुआ और प्रतिज्ञा की कि यदि वे आज यहाँ रहे तो हम उनको बिना पीटे नहीं छोड़ेंगे । जब उन्होंने यह दृढ़ प्रतिज्ञा की तो राव कर्णसिंह के श्वसुर ठाकुर मोहनसिंह जी ने, जो कर्णवास के निवासी हैं- अपने दामाद राव कर्णसिंह से जाकर कहा कि यदि तुम्हारे अच्छे दिन हैं तो तुम यहाँ से इसी समय चले जाओ अन्यथा आज यहाँ के क्षत्रिय लोग तुम्हारे सब हथियार छीन लेंगे और तुमको भी भली-भाँति पीटेंगे । यह सत्य समझो कि आज अवश्य तुम्हारी मानहानि होगी । यह सुनकर राव साहब तत्काल ही यहाँ से चल दिये और घर जाते ही रुग्ण हो गये और उन्मत्तों की भांति कपड़े फाड़ने लगे । प्रयाग में एक मुकदमा पचास हजार रुपये का हारे और अपने मत (धर्म) के विरुद्ध मांस तथा मदिरा का सेवन आरम्भ कर दिया । सारांश यह कि उनकी बहुत दुर्दशा हुई ।

इसी बात को ठाकुर गोपालसिंह जी रईस ने इस प्रकार वर्णन किया 'कि शरत्पूर्णिमा (जो १४ असौज को होती है) को राव कर्णसिंह आतिशबाजी का सामान, वेश्या, रासधारिये, गवैय्ये तथा दशहरे से सम्बन्धित सरकारी पहरा साथ लेकर गंगातट

पर आये । उस समय गंगा बहुत बढ़ रही थी । उसने सिपाहियों को तलवार देकर स्वामी जी को मारने के लिये भेजा । स्वामी जी स्वयं कहते थे कि जब वह लोग आये तो उन्होंने आकर आधी रात के पश्चात् का 'कुटयां कोऽस्ति ' अर्थात कुटी में कौन है ? मैंने उठकर जोर से 'हूँ' कहा और एक पाँव पृथिवी पर मारा जिसने वह 'पलायनं कृतम्' अर्थात् भाग गये । कैथलसिंह ने स्वामी जी को कहा कि अब यहाँ से चलकर किसी गुफा में रहें जिस पर स्वामी जी तो वहीं रहे परन्तु कैथलसिंह वहाँ से भागा और उसने कर्णवास में आकर ठाकुरों की हवेली में ठाकुर किशनसिंह के पांव मले । जब वह जागे तो सारी घटना उनको सुनाई । वह उठे और लाठी लेकर तोताराम और आनन्दी-सिंह कान्यकुब्ज ब्राह्मण को साथ लेकर वहाँ पहुँचे । पूछा कि महाराज क्या आज्ञा है ? स्वामी जी ने कहा कि कुछ आज्ञा नहीं उसने कहा कि नहा, जो आप कह सो कर । स्वामी जी ने कहा कि वह तुम्हारा सम्बन्धी है, हम यह नहा चाहते कि तुम जमादार व्यर्थ आपस म लड़ो । प्रात:काल हम सब पहुँच गये । इतने में कुन्दनसिंह, मदनलाल, खड़कसिंह तथा एक ब्राहमण- ये चारों मनुष्य उनके कूप पर कुल्ला करने आये । अभी तक हम लोग वही चर्चा कर रहे थे कि उनमें से खड़कसिंह ने आकर कहा कि तुम हमारी सरकार का नाम लेकर क्या कहते हो? इस पर आनन्दीसिंह ने फिर कर्णसिंह को बुरा कहा और किशन सिंह जी ने कहा कि राव साहब को उचित नहीं था कि एक संन्यासी के ऊपर तलवार लेकर आवें । यदि वह मर्द के बच्चे हैं तो अब हमारे सामने आवें । यदि कुछ पौरुष है तो राव को कहो कि हमारे सामने आवे ।

यह बात उसी समय राजघाट की ओर फैल गई । दूसरे दिन राजघाट से बीस - पच्चीस सशस्त्र पंजाबी वहाँ आये और स्वामी जी से निवेदन किया कि चाहे हमारी नौकरी चली जावे परन्तु आप हमको आज्ञा दें कि हम सब दुष्टों को भगा दें । स्वामी जी ने बहुत रोका और वह सब आनकर व्याख्यान में बैठ गये । इतने में नन्दकिशोर ब्राह्मण कर्णवास निवासी आये और बोले कि महाराज ! राव साहब तो ऐसे मूर्ख नहीं हैं जो ऐसा काम करें। स्वामी जी ने कहा कि प्रतीत होता है कि वह तुमको द्रव्य देते हैं इसलिए झूठ बोलते हो। उसने बातें करते हुए हाथ आगे किया तो स्वामी जी ने उसका हाथ पकड़ लिया । वह कहता था कि जैसे वज्र पड़ता है ऐसा उनका हाथ प्रतीत हुआ । जो मनुष्य स्वामी जी के पास आता और उनसे यह वृतांत पूछता तो स्वामी जी उसे संस्कृत में सुनाते थे ।

क्रमशः ....

सत्यार्थ प्रकाश काव्य सुधा

महर्षि दयानन्द कृत सत्यार्थ प्रकाश का काव्यानुवाद

– पं० देवनारायण तिवारी 'निर्भीक'
मो0 : 9830420496

(११)

श्री पं० देवनारायण तिवारी – आर्य समाज के उपदेशक, विद्वान् और कवि हैं, इनकी अनेक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं जिसमें मर्यादा पुरुषोत्तम, योगेश्वर, एकादशोपनिषद् (काव्य) एवं श्री कृष्ण चरित मानस (रामचरित मानस की भाषा-शैली में) ४ महाकाव्य हैं । पं० जी ने सत्यार्थ प्रकाश का भी छन्दबद्ध भावानुवाद किया है । आर्य समाज कलकत्ता ने इसे आर्य संसार मासिक पत्र में धारावाहिक रूप से प्रकाशित करने का निश्चय किया है ।

यह तेरहवीं कड़ी आपके समक्ष है । – सम्पादक

प्रथम समुल्लास (गत अङ्क से आगे)

'' अञ्जनं व्यक्तिर्म्लेक्षणं कुकाम इन्द्रियैः प्राप्तिश्चेता स्माद्यो निर्गतः पृथग्भूतःस निरञ्जनः।।

छन्द - ईश्वर न कोई व्यक्ति है उसकी तरह रहता नहो ॥
अर्थात् आकृति हीन वह इन्द्रिय-विषय धरता नहीं ॥
करता न वह दुष्कामना,आचार सर्व पवित्र है ।
इससे **''निरञ्जन''** नाम है, वह विमल शुद्ध चरित्र है ॥ १३७ ॥

(गण संख्याने) इस धातु से **'गण'**, शब्द सिद्ध होता है और इसके आगे **'ईश'** वा **'पति'** शब्द रखने से **'गणेश'** और **'गणपति'** शब्द सिद्ध होता है ।

''ये प्रकृत्यादयों जडा जीवाश्च गण्यन्ते संख्यायन्ते तेषामीशः स्वामी पतिः पालको वा''

छन्द - जो जड़ प्रकृति औ जीव गण का एक स्वामी मात्र है ।
प्रख्यात सारी वस्तुओं का और सबका पात्र है ॥
रक्षा और पालन करे सबका सदैव समान ही ॥
इससे उसे **''गणपति''** कहें वह ही **''गणेश''** महान भी ॥१३८॥

सबको समझ यह अर्थ, इसको मान चलना चाहिए ॥
पर ब्रह्म चेतन का हृदय में ध्यान करना चाहिए ॥ १३९॥

''यो विश्वमीष्ठे स विश्वेश्वरः ।।

छन्द - संसार का जो इष्ट है, जिससे अवस्थित विश्व है ।
अध्यक्ष है सबका अकेला, दीर्घ है न ह्रस्व है ॥
ऐश्वर्य सारी सृष्टि का उसमें समाया सर्वदा ॥
इस हेतु **''विश्वेश्वर''** उसे कहते विबुध है सर्वदा ॥ १४० ॥

''यः कूटेऽनेक विध व्यवहारे स्वस्वरूपेणैव विष्ठति स कूटस्थः परमेश्वरः''

छन्द - व्यवहार सारे विश्व के जिसमें कि ओतप्रोत हैं ।
वह भी सभी में व्याप्त है, सब कुछ उसी की ज्योत है
आधार है सबका वही पर भिन्न है व्यवहार से ।
रञ्चक बदलता है नहीं निज रूप जग आधार से ॥
है सब विकारों से रहित, सबका निवास स्थान है ॥
इस हेतु ही **''कूटस्थ''** प्यारे ब्रह्म का इक नाम है ॥ १४१ ॥

(देवी) परमात्मा में विश्व का कुछ चिन्ह होता है नहीं ।
उसका न कोई लिङ्ग है, वह एक-सा है सब कहीं ॥
वह **''देव'' ''देवी''** उभय है, गुण सकल देव-समान हैं ॥
इस हेतु **''देवी''** भी उसे सब मानते विद्वान् हैं ॥ १४२॥

जब ईश का होगा विशेषण **''देव''** तब कहलायेगा ॥
''चिति'' रूप में जब ब्रह्म हो **''देवी''** तभी बन जायेगा ॥ १४३॥
जैसे- **''ब्रह्म चितिरीश्वरश्चेति''**

(शक्लृ शक्तौ) इस धातु से **''शक्ति''** शब्द बनता है ।
यः सर्व जगत्कत शक्नोति स शक्तिः।।
छन्द- उसमें बसें सब शक्तियां वह शक्तिमान् समर्थ है ।
जग के बनाने औ चलाने में नहीं असमर्थ है ॥
अर्थात् रचता सकल संसृति, निज कला की शक्ति से ।
अतएव उसको **''शक्ति''** कहते भक्तगण निज भक्ति से ॥ १४४॥

(श्रिञ् सेवायाम्) इस धातु से **''श्री''** शब्द सिद्ध होता है ॥
यः श्रीयते सेव्यते सर्वेण जगता विद्वद्भिर्योगिभिश्च स श्रीरीश्वरः।

छन्द - सेवन करें जिसका सभी, विद्वान् योगीजन सदा ।
अर्थात् जिसकी भक्ति करते, ध्यान धारे सर्वदा ॥
(हैं श्रीमती, श्रीमान् वे जन जो उसे धारण करें ॥)
इस हेतु है **''श्री''** नाम उसका हम वही पारण करें ॥ १४५ ॥

(लक्ष दर्शनाङ्कनयोः) इस धातु से **''लक्ष्मी''** शब्द सिद्ध होता है ।

''यो लक्षयति पश्यत्यङ्क्ते चिन्हयति चराचरं जगदथवा वेदैराप्तैर्योमिश्च यो लक्ष्यते स लक्ष्मीः सर्व प्रियेश्वरः ''।

छन्द- जो देखता सारे जगत् को एक सम है सर्वदा ॥
चिन्हित करे जड़ और चेतन विश्व रचकर के मुदा ॥
रच मात्र सुन्दर प्राणियों के इन्द्रियादि शरीर को ।
तरु-पत्र, फल अरु फूल रचता, औ बनता नीर को ॥ १४६ ॥

पाषाण, मिट्टी, चन्द्र, सूरज सब बनाता चिन्ह दे ॥
शोभायमान करे सभी को, लक्ष्य सबको भिन्न दे ॥
जो लक्ष्य है योगी जनों का और विद्वत् वर्ग का ॥
धार्मिक जनों का इष्ट है जो धाम है अपवर्ग का ॥ १४७ ॥

वेदादि शास्त्र पुनीत देकर अङ्ग संसृति का भरे ।
सद्ग्यान देकर जीव को अघ से सदा रक्षा करे ॥
इस हेतु उस परमात्मा का नाम **''लक्ष्मी''** है सुभग ।
आराधना उसकी करें सब और धारें ईश भग ॥ १४८ ॥

(सृगतौ) इस धातु से **''सरस''** उससे मतुप और ङीप प्रत्यय होने से **''सरस्वती''** शब्द सिद्ध होता है ।

सरो विविधं ज्ञानं विद्यते यस्यां चित्तौ स सरस्वती ।।

छन्द- जिसको सभी विज्ञान, अक्षर, शब्द का शुभ ज्ञान हो
अरु अर्थ औ सम्बन्ध तथा प्रयोग का भी मान हो ॥
सबका यथावत् बोध रख सरसित करे मेधा महा ।
इस हेतु नाम **''सरस्वती''** उस ब्रह्म का श्रुति ने कहा ॥ १४९ ॥

क्रमशः ....

वेद में प्रसन्नता के उपाय

- डॉ० अशोक आय

मानव सुखी तब ही रह सकता है, जब उसका मन उत्तम हो, जब वह प्रसन्न रहे, सुखों की उस पर सदा वर्षा होती रहे । इसके लिए यह आवश्यक है कि वह भौतिक सुखों की ओर न भाग कर वास्तविक सुख के साधनों को ग्रहण करने का संयोजन का प्रयत्न करता रहे । इस सम्बन्ध में ऋग्वेद का यह मन्त्र खुले स्वर से हमारा मार्गदर्शन करते हुए उपदेश कर रहा है कि:-

विश्वदानीं सुमनसः स्याम पश्येम नु सूर्यमुच्चरन्तम् ।
तथा करद्वसुपतिर्वसूनां देवाँ ओहानाऽवसागमिष्ठ ।। ऋग्वेद ६.५२.५

मन्त्र उपदेश करते हुए हमारा मार्गदर्शन कर रहा है और कह रहा है कि हम सदा उत्तम मन वाले हों तथा सदा प्रसन्न रहने वाले हों । यहाँ मन्त्र कह रहा है कि प्रसन्न रहने की औषध है उत्तम मन । जिसका मन उत्तम है, भौतिक क्रियाओं से बचा हुआ है, कभी किसी का बुरा करने का सोचता नहीं है, बुराइयों से बचा हुआ है, उसे कभी कोई कष्ट क्लेश नहीं घेर सकता । इसलिये इस प्रकार का व्यक्ति सुखी होता है प्रसन्न होता है । निराशा उत्तम मन वाले प्राणो को कभी छू भी नहीं सकती। इसलिए हे मानव ! तू उत्तम मन वाला बन कर सदा प्रसन्न रह ।

मन्त्र आगे कहता है कि हम ज्ञान रूपी सूर्य को सदा उदित होते हुए देखें । हम जानते हैं कि सब क्रियाओं का मूल ज्ञान है और मन्त्र इस ज्ञान को सदा अपने अन्दर उदय होने का उपदेश कर रहा है। जब हम वेद रूपी ज्ञान का सूर्य अपने अन्दर उदय कर पाने में सक्षम होंगे तो हम उत्तम प्रसन्न रह सकेंगे ।

मन्त्र हमें परमपिता परमात्मा की सदा प्रार्थना करने का उपदेश दे रहा है और कह रहा है कि वह प्रभु सब प्रकार के ऐश्वया का स्वामी है । पृथिवी आदि जितनी भी वस्तुएं हमें दिखाई दे रही हैं, हम सब का आधार भी वह प्रभु ही है । इस कारण ही हमारा अस्तित्व है । यदि यह न हो तो हमारा अस्तित्व ही संभव नहीं है । इस सब के होने से ही हमारी प्रसन्नता संभव हो पाती है । इसलिए हम सदा उस प्रभु की सेवा में ही रहें ।

हम उस सर्वशक्तिमान प्रभु से यह भी प्रार्थना करें कि हे पिता ! आप दिव्य गुणों की वर्षा करने वाले हैं । ऐसी कृपा करें कि हम भी इन दिव्य गुणों को ग्रहण कर पावें । इतना ही नहीं आप हमें सदा विद्वान् लोगों का सत्संग भी कराते रहें ताकि हम उनसे भी ज्ञान प्राप्त कर सकें । आप सब के रक्षक हो, आप के चरणों में रहते हुए हम भी सदा आप से रक्षित होते रहें ।

इस प्रकार सार रूप में उपदेश देते हुए यह मन्त्र एक स्पष्ट तथा बड़ा ही सरल सन्देश दे रहा है कि :

१. हम अपने मन में सदा उत्तम विचार रखें
२. हम सदा प्रसन्न रहें

वेद ने हमें यह आदेश क्यों दिया है ? स्पष्ट है कि उत्तम विचारों वाला मन ही सुख शांति तथा धन ऐश्वर्य की प्राप्ति का साधन है । यही प्रसन्नता का साधन है । एक प्रसन्न मनवाला व्यक्ति कभी दु:खी नहीं हो सकता । जब मन के अन्दर असत्य, ईर्ष्या, द्वेष, छल-कपट सरीखे विचार जब तक मन में रहेंगे तब तक वह लड़ाई-झगड़ा, कलह व क्लेश में उलझा रहेगा । मन में कभी शान्ति न आ पावेगी। अशांत मन कभी भी उत्तम नहीं हो सकता । जब मन में बुराइयां भर रखी हैं तो वहाँ अच्छे विचारों के लिए स्थान ही नहीं रहता । इसलिए मन से यह बुराइयां निकाल कर उत्तम विचारों के लिए स्थान खाली करें और अपने मन को उत्तमता की ओर लगा कर उत्तम विचारों का प्रवेश करावें । एक प्रसन्नता ऐसी भी होती है जिसे हम अज्ञान मूलक कह सकते हैं । इस प्रसन्नता का कारण हमारा अज्ञान होता है । जैसे अफीम, भंग, चरस, गांजा, शराब आदि अभक्ष्य पदार्थों आदि के सेवन से मानव कुछ समय के लिए अपनी चिंताओं से मुक्त हो जाता है किन्तु तो भी वह सच्ची प्रसन्नता नहीं पा सकते क्योंकि कुछ समय के पश्चात ही इन वस्तुओं का सेवन न केवल परिवार में बल्कि गली मोहल्ले में भी लड़ाई, झगड़े का कारण बन जाता है । अतः इससे प्रसन्नता के स्थान पर उसे कष्ट ही मिलता है, जबकि वेद तो ज्ञान मूलक प्रसन्नता प्राप्ति का उपदेश करता है । मन्त्र में कहा भी है कि **ज्ञान के सूर्य को हम प्रतिदिन उदय होते हुए देखें ।** अर्थात हम प्रातः बिस्तर छोड़ने से लेकर रात्रि को बिस्तर में आने तक निरंतर अपने ज्ञान को बढ़ाने का प्रयास करते हुए सच्चे अर्थो में प्रसन्नता प्राप्त करने के प्रयास में रहें। सूर्य परम पिता के विशेषणात्मक नामों में से एक है ।

इससे इस मंत्रांश का यह भी भाव बनता है कि जो पिता सब का प्रकाशक है, हम उस परमपिता परमात्मा को अपने हृदय के आकाश में सब स्थानों पर अनुभव करें, उसकी सच्चे हृदय से प्रार्थना करते हुए आशा करें कि चाहे हम दु:ख में हों या सुख में, हानि हो रही हो अथवा लाभ, विजयी हो रहे हों या पराजित, प्रत्येक अवस्था में हमारी यह प्रसन्नता बनी रहे ।

वह प्रभु मंगलमय है, वह प्रभु आनंद देने वाला है, वह प्रभु सुखदायक है । उस प्रभु की कृपा को पाने के लिए, उस प्रभु की दया को पाने के लिए हमें सदा निरंतर अभ्यास करने की आवश्यकता होती है । निरंतर अभ्यास से, प्रभु के दिए गये वेद ज्ञान के निरंतर स्वाध्याय के बिना हम कुछ भी प्राप्त नहीं कर सकते । इसलिए हम निरंतर, विशेष रूप से प्रतिदिन शुभ मुहूर्त से उठें तथा प्रभु के श्री चरणों में बैठ कर उसकी वाणी वेद का सदा स्वाध्याय करें । इससे ही हम विषाद रहित होकर प्रसन्न होंगे, सुखी होंगे ।

प्लाट संख्या - ६१, प्रथम तल
पाकेट - १ रामप्रस्थ ग्रीन,
सैक्टर - ७, वैशाली - २०१०१०
गाजियाबाद उ०प्र०
फोन - 09719528068

ऊर्ध्वरेता लक्ष्मण : एक भव्य चरित्र

- श्री परीक्षित मंडल 'प्रेमी', साहित्यालंकार

रामचरित के प्रत्येक आख्यान के साथ जुड़े होकर भी वीरवरेण्य लक्ष्मण अपना एक स्वतंत्र व्यक्तित्व रखते हैं । इनका दाक्षिण्यमय चरित त्याग, तपस्या और शौर्य की त्रिवेणी है । इनके त्याग में संसार के वैराग्य, तपस्या में ऋत-प्रवीत जीवन की अंतस्साधना और शौर्य में अप्रतिम वीरत्व की शूरता प्रदीप्तिमान है । इनका विराट व्यक्तित्व कर्मयोग के भास्वर भावोर्जा, विमल विचार तेजस् तथा अमृतज्योति के प्राणतत्त्व से देदीप्यमान है । इनका अहरह तप:पूत शील भ्रातृ-वात्सल्य से ओतप्रोत है। इनका चिन्मय व्यक्तित्व धृति, धर्म, सत्य के दिव्य भावों से मूर्तिमंत है तथा भास्वर भाव के विशद आयाम से स्पंदित है और संपूर्ण सेवा-साधना विषम विषाद के मल कलुषित से विरहित है । इनका तप:पूत चरित मुख्यतया सीता-राम के सेवार्थ आत्मार्पित है तथा इनके समस्त उदात्तशील कर्म रामप्रीत्यर्थ तरंगित होते हैं । अद्भुत शौर्य, अप्रतिम पराक्रम, अदम्य साहस तथा पावनपूत निर्मल आचरण इनके चरित का मूल आधार हैं । इन्हीं प्राणवान् तथा मूल्यवान् उदात्त भावनाओं पर चलते हुए इन्होंने अपनी अंतश्चेतना और जीवन व्यवहार की नैसर्गिक पृष्ठभूमि में नैतिक मर्यादाओं को विराट फलक पर उपस्थापित किया है । ये विघ्नों के विंध्याचल में धैर्यपूर्वक आरोहण करने वाले अप्रतिम कर्मवीर हैं । ये महानरपुंगव श्रीराम-सेवा का प्राणमय प्रस्फुरण स्वयं के अंदर सदैव अनुभव करते हुए कंटकाकीर्ण गहन अरण्य की दुर्निवार यातनाओं को धैर्यपूर्वक सहने वाले धीरोदात्त गुणों से विभूषित शालप्रांशु साधक सिद्ध सुजान के अप्रतिम प्रतिमान हैं । तपस्त्याग का सात्विक-औदात्य, धर्म, शील सत्य की ज्योति-तरंगित भव्यता की दिव्य-किरण से इनका अप्रतिम गत्यात्मक व्यक्तित्व सतत प्रोद्भासित रहा है । तभी तो वीरवर रामानुज ने कष्टों के खड्गधार पर चलते हुए भी अपने गरिमामय आदर्शों के दिव्यदीप को कतई निर्वापित होने नहीं दिया । इन्होनें अपनी आत्मा का अमृतासव की अबाध ज्योति-धारा चतुर्दश वर्षों तक सत्यसंध श्रीराम के सेवा-सान्निध्य में अहर्निश प्रवाहमान किया है ।

ऊर्ध्वरेता वीरवर सुमित्रानंदन का देवत्व-ज्योतिरसि चरित आर्ष रामायण के आदर्श पात्रों में सभी दृष्टियों से जाज्वल्यमान और परमोदात्त गुणों से प्रोद्भासित है । सात्विक शील-सौंदर्य के ये सर्वतोभद्रमय सद्गुण जिनसे नित्यसुखद सुषमामय, मधुमय स्वस्तिप्रद-आनंद-सौभाग्य और मांगलिक दिव्य चेतना का अनायास समुदय होता है, जिनसे सर्वात्मभाव आनंद की सांद्रस्निग्ध कनकाभ किरणें स्वत: स्फुरित होती है, शुभ लक्ष्मण है । इन महतोमहीयान ज्योतिर्मय गुणों से विभूषित श्री सौमित्र शाश्वत शुभ गुणों के शुभ लक्षण हैं । मर्यादा पुरूषोत्तम श्रीराम ने आर्षरामायण २/५२११ में मुक्तकंठ से कहा है उवाच राम: सौमित्रिं लक्ष्मणं शुभ लक्षम्णम् । ये लक्ष्मीवर्धन हैं, साथ ही भाग्यवान्, लक्ष्मीवान् और कांतिमान् हैं । साथ वनगमन के लिए प्रस्तुत अनुज से श्रीराम का २/२१/१० में पूतवचन है-

स्निग्धो धर्मरतो वीर सततं सत्पथे स्थित: ।
प्रिय: प्राणसमो वश्यो विजयेश्च सखा च मे ।।

हे लक्ष्मण, तुम मेरे स्नेही, धर्मपरायण वीर सदा सन्मार्ग में स्थित रहने वाले हो । मुझे प्राणों के समान प्रिय हो तथा मेरे वश में रहने वाले आज्ञापालक और सखा हो । सखा ही, सौमित्र उनके पिता के तुल्य हैं । महर्षि वाल्मीकि ने ३/१५/२९ में लिखा है-

भावज्ञेन कृतज्ञेन धर्मज्ञेन च लक्ष्मण ।
त्वया पुत्रेण धर्मात्मा न संवृत्तः पितामम।।

'लक्ष्मण, तुम मेरे मनोभाव को तत्काल समझ लेने वाले, कृतज्ञ और धर्मज्ञ हो । तुम जैसे पुत्र के कारण मेरे धर्मात्मा पिता अभी मरे नहीं हैं, तुम्हारे रूप में अब भी जीवित ही हैं । पंचवटी में लक्ष्मण कृत पर्णशाला में खड़े-खड़े श्रीराम अनुज की निश्छल सेवा से भावविभोर होकर ये उद्‌गार प्रकट करते हैं । और, पुरस्कार के रूप में उन्हें प्रगाढ़ आलिंगन प्रदान करते हैं । जिनकी सतत उपस्थिति से प्रतिपल नव-नव सुख-आनंद का दिव्य संचार हो वह लक्ष्मीवर्धन लक्ष्मण है । केवल श्रीराम का ही नहीं विदेहनंदिनी वैदेही का भी कुछ ऐसा ही पूतवचन है -

पितृवद् वर्तते रामे मातृवन्मां समाचरत् । (रामायण ५/३८/५९)
राजपुत्र प्रिय श्रेष्ठः सदृश्य श्वसुरस्य मे । (रामायण ५/३८/५९)
मत्त प्रियतरो नित्यं भ्राता रामस्य लक्ष्मणः । (रामायण ५/३८/६०)
यं दृष्टवा राघवौ नैव वृत्तमार्यमनुस्मरत् । (रामायण ५/३८/६१)
मृत्युनित्यं शुचिर्दक्षः प्रियो रामस्य लक्ष्मणः । (रामायण ५/३८/६२)

लक्ष्मण का मेरे प्रति माता के समान तथा राम के प्रति पिता के समान भाव रहता है । राजकुमार राम के प्रिय पात्रों में ये श्रेष्ठ हैं और मेरे श्वसुर के सदृश्य हैं । राम का भाई लक्ष्मण के प्रति मुझसे भी अधिक प्रेम रहता है । उन्हें देखकर राम अपने मृत पिता को भी भूल गए हैं। लक्ष्मण नित्य मृदु, पवित्र, दक्ष तथा राम के प्रिय भ्राता है । उनके सर्वतोभद्र शील के ये प्रख्यात गुण उनके शुचि, गर्वोन्नत जीवन में यथार्थतः आचरित हैं । सर्वतोभावेन पीयूष-प्रभा-मय शुभ लक्षण लक्ष्मण के चरित चित्त में नित्य मृदुता के साथ भ्राजमान है ।

महाचेता सुमित्रानंदन का संपूर्ण जीवन त्याग और संघर्ष से मुखरित, विलसित और पल्लवित ऐसा अविरल प्रवाह है जो न केवल स्वेद-कणों से वरन् अपने रक्त-कणों में उसकी गति में तीग्मतेज तीव्रता एवं गरिमामय गहनता भरता चलता है । इन्होंने जीवन की कठिनतम कराल-कठोर, दुर्विषह, दारूण, दुखद परिस्थितियों तथा प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष विघ्न-बाधाओं को विखंडित करते हुए नैतिकता से उद्भासित आदर्श चरित को प्रतीकित किया है ।

आज जिस ढंग से पारिवारिक व्यवस्था चरमराकर विखंडित हो रही है । एक परिवार में जब एक सहोदर भाई दूसरे भाई के रुधिर का प्यासा हो तब लघुमानवत्व समाज के लिए सर्वतोभद्र सौमित्र का ग्रहणीय जीवनादर्श एक सुमहत्तर सार्वभौम उदात्त आर्दश का प्रतिमान प्रतिबिंबित करता है । आर्ष रामायण, अरण्यकांड ६९/३९-४० में वह धर्मधुरंधर श्रीराम के लिए देहत्याग स्वयं करना पसंद करता है । श्रीराम जी को लक्ष्मण कहता है:-

मां हि भूतबलिं दत्वा पालयस्व यथासुखम् ।
अधिगन्तासि वैदेहीमचिरेणेति में मतिः ।।
प्रतिलभ्य च काकुत्स्थ पितृपैतामहीं महीम् ।
तत्र मां राम राज्यस्थः स्मर्तुमर्हसि सर्वदा ।

अयिराम ! इस कबंध राक्षस के लिए मुझे बलि देकर तू सीता को शीघ्र प्राप्त कर लेगा, पुनः अपने पिता-पितामह की राष्ट्रभूमि को प्राप्तकर राज्य में स्थित हुआ मेरा स्मरण कर लिया करना ।

अधुनातन समाज के प्रेमप्रभा-सहानुभूतिहीन, संवेदनहीन, कपट, प्रपंचपूर्ण निरास्वार्थी जीवन के लिए लक्ष्मण ने अनुशासन आधारित उदात्त जीवन, अनुकरणीय आदर्श, स्पृहणीय और महत्तम जीवनादर्श को स्पंदित किया है उसमें आत्मप्रवंचना तथा विषय-वासना का विजृंभण नहीं है, बल्कि सार्वभौमिक सह-अस्तित्व, सह जीवन और एकात्मीयता का भास्वर भाव पूर्णरूपेण झंकृत है । वीरवर लक्ष्मण भ्राता राम के लिए प्राण देने को सर्वतोभावेन उद्यत है । जबकि आज के हेतुवादी, भौतिकवादी युग में सबको अपना-अपना प्राण प्यारा है । कोई अपने सहोदर भ्राता के कल्याण के लिए प्राण नहीं दे सकता । आज सहोदर भाई और भाई के बीच परस्पर प्रेम-सहानुभूति का मौलिक संबंध नहीं रह गया है । सभी अपने अहं-तोषण, अपनी भौतिक सुख-विलास की ऐषणा को तृप्त करने के लिए सहोदर भाई के रक्त में मरण-पूजक आत्मघाती जहर फैलाने का जघन्यतम अपराध का अर्जन कर रहा है । ऐसी विषादपूर्ण कुहेलिका में लक्ष्मण का महिमाशाली जीवनादर्श घटन-विघटन पूर्ण जड़ विषाद से हमें सुमनस्यमान चिन्मय आनंद में ले जाने वाला है । एतदर्थ जितेंद्रिय लक्ष्मण का सदाचार संदीप्त आचरण सुर-वंदित तथा ऋषिवृंद प्रशंसित रहा है । इस संबंध में रामायण ५/२२ में वर्णित लक्ष्मण का सदाचार शोभित आचरण अनुकरणीय है-

नाहं जानामि केयूरे नाहं जानामि कुण्डले ।
नूपुरे त्वभिजानामि नित्य पादाभिवंदनात् ।।

जनकनंदिनी जानकीजी का अन्वेषण करते हुए वन-पथ में बिखरे पड़े कुछ आभूषणों को देख श्रीराघवेंद्र जब लक्ष्मण से पूछने लगे कि हे लक्ष्मण ! तुम इन आभूषणों को पहिचानते हो, ये सीताजी के हैं ? तो उत्तर में लक्ष्मण ने तपाक से कहा कि मैं सीताजी के बाजूबंद और कुंडली को नहीं पहचानता, किंतु उनके पैर के नूपुर को अवश्य पहचानता हूँ, क्योंकि प्रतिदिन चरण-वंदना के साथ मैं इन्हें देखा करता था । यह सुमित्रानंदन की विमल चरित है । लक्ष्मण चौदह वर्ष तक वनों में सीताजी के साथ रहे परंतु कभी आँख उठाकर सीताजी की ओर नहीं देखा । पुन: इन्होंने चौदह वर्ष तक नींद, नारी, भोजन रहित जीवन यापन किया । इस प्रकार लक्ष्मण के निर्मल चरित-चित्त में जो सदाचार की छवि उद्भासित है, संप्रति वह अनुकरणीय है । क्योंकि इस सदाचार प्रणोदित छवि से हमारा शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, आत्मिक तथा आध्यात्मिक जीवन निर्मल, निष्कलुष हो द्युतिमान होता है । इस प्रकार सीताराम चरण-रक्तिम-अंबुज साधक-आराधक लक्ष्मण का महत्तम चरित सदाचार संदीप्त और दिनमणि-सम-भास्वर भूषित रहा है ।

स्वर्णमयी लंका की समर भूमि में मूर्च्छित हुए वरेण्यवीर लक्ष्मण को श्रीराम ने देखा तो उनके नयन नीर से छलछला आए और बाण-बिद्ध शरीर देख राघवेंद्र का दिल-दहल गया । लक्ष्मणजी की चिंताजनक अवस्था देख श्रीरामजी ने प्रलाप करते हुए कहा-

किं मे युद्धेन किं प्राणैर्युद्धे कार्यं न विद्यते । यत्रायं निहितं शेते रणमूर्धनि लक्ष्मण:।।
देशे देशे कलत्राणि देशे देशे च बान्धवा:। तं तु देशं न पश्यामि यत्र भ्राता सहोदर:।।(युद्धकांड १०२/१३)

'अब मैं युद्ध करके क्या करूँगा, और मेरे जीने से भी क्या लाभ ? अब मुझे रावण से युद्ध करने की भी आवश्यकता नहीं है क्योंकि लक्ष्मण तो अब समर-भूमि में सो रहा है । स्त्री और बंधुबांधव तो सब जगह मिल जाते हैं, परंतु ऐसा कोई स्थान दिखाई नहीं देता जहाँ सहोदर भाई मिल सके।''

सात्विक साधनाओं से संदीप्त सौमित्र जब दशग्रीव-रावण के ब्रह्मास्त्र से मूर्च्छित हो गए तब सुषेण वैद्य के मृतसंजीवनी विशल्यकरणी, सावर्ण्यकरणी तथा संधानकरणी औषधोपचार से लक्ष्मणजी स्वस्थ हो गए तब श्रीरामजी ने उनसे तपाक से पूछा कि आपको कैसी वेदना हुई उन्होंने कहा -

ईषन्मात्रमहंवेदमी स्फुटं योवेत्ति राघवः।
वेदना राघवेंद्रस्य केवलं व्रणिनो वयम्।।(हनुमान्नाष्टक १३/३८)

मैं तो इस वेदना को थोड़ा-सा ही जानता हूँ, ठीक रूप से तो राम ही जानते होंगे: क्योंकि वेदना तो राम को ही हुई, मुझे तो केवल घाव ही हुआ था ।

इस प्रकार लक्ष्मण का अपराजेय चरित्र और ज्योतिषमान् यथार्थ जीवन दर्शन किसी भी राष्ट्र के लिए सदा शुभंकर है और विभ्रांत समाज के लिए विश्रांति-प्रदायक है। आज के संघर्ष संकुल युग में सदाचार दीपित व्यक्तित्व तथा स्वस्तिप्रद आदर्शों के स्थापन के लिए वीरवर लक्ष्मण-सा ज्योतिर्स्नात एवं जागरणशील आचरण अनुकरणीय तथा ग्रहणीय है। श्रीराम की विमलवाणी में लक्ष्मण है-

अयं स समरश्लाघी भ्राता में शुभ लक्ष्मणः।

आइए, हम सब श्रद्धा, समर्पण और सकारात्मक दृष्टिकोण से लक्ष्मण चरित का सान्निध्य प्राप्तकर निज चरित को प्रदीप्तिमान करें । किमधिकम् ।

संपर्क :- 'वेदसदन' अमरपुर
पो०'- पथरा
जिला - गोड्डा ८१४१३३
(झारखंड)

मो०-९१६२२०८००५

वर-चाहिए

नाम - पूजा आर्या
पुत्री - रविभूषण आर्य
जन्म तिथि - ६-१०-१९९४
लम्बाई - 5' 4"
रंग - साफ
शिक्षा - बी.ए. (Modern History)

नालन्दा (बिहार) निवासी हेतु सुयोग्य आर्य वर चाहिए ।

सम्पर्क सूत्र:
रविभूषण आर्य
लाहेड़ीबेन हाउस, पो०- बिहार शरीफ
पी० एस० -लाहेड़ी, जि० - नालन्दा - 803101
Mobile: 9835848091

''महर्षि देवदयानन्द एक सच्चे गुरु थे''

- खुशहाल चन्द आय

सच्चा गुरू वही होता है जो अपने शिष्यों को अच्छी शिक्षा देकर अज्ञान से ज्ञान की ओर, अन्धकार से प्रकाश की ओर, कुपथ से सुपथ की ओर ले जाता है । अन्धविश्वास, पाखण्ड व मूर्तिपूजा से हटाकर ईश्वर की सच्ची उपासना जो संध्या, हवन, सत्संग व अष्टांग योग हैं, उनकी ओर ले जाता है । इन काया में देव दयानन्द ने अपनी एक विशेष अच्छी व अलग ही पहचान बना रखी है । यह सद्गुरू श्रृंखला आदि सृष्टि से चली आ रही है और सृष्टि के अन्त तक चलती रहेगी क्योंकि मनुष्य एक अल्पज्ञ प्राणी है, उसको सही रास्ता दिखाने के लिए अपने से अच्छा एक सच्चे गुरु की आवश्यकता पहले भी सदा रही है और आगे भी रहती रहेगी ।

जैसा कि मैंने लिखा कि सद्गुरु की श्रृखंला सृष्टि के आदि से चली आ रही है । देवों के देव, पिताओं के पिता और गुरुओं के गुरू ईश्वर ने सृष्टि के आदि में, सृष्टि की पूरी रचना करने बाद मनुष्यों की उत्पत्ति अनेक नौजवान स्त्री-पुरुषों के रूप में की जिससे आगे सृष्टि चलती रहे । तभी ईश्वर ने मनुष्यों को सही मार्ग दिखाने के लिए यानि धर्म, अर्थ, काम को धर्मानुसार करते हुए मोक्ष जो जीव का अन्तिम लक्ष्य है इसे प्राप्त करने के लिए सबसे अधिक पवित्र आत्मा वाले चार ऋषियों जिनके नाम अग्नि, वायु, आदित्य, अंगिरा था, उनके श्री मुख से चार वेदों को जिनके नाम ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद व अथर्ववेद हैं, उनको उच्चारित करवाया । वह वेद-ज्ञान उपस्थित सभी पुरुषों व स्त्रियों ने सुना, परन्तु उनमें भी ब्रह्मा जो सर्वश्रेष्ठ ऋषि थे, जिनकी स्मरण शक्ति बहुत तेज थी, उन्होंनें इन चारों वेदों को कंठस्थ कर लिया और उपस्थित लोगों को सुनाते रहे फिर यह क्रम पिता पुत्र को, गुरू शिष्य को सुनाना लाखों वर्षों तक चलता रहा । जब स्याही, कलम, दवात, कागज का अविष्कार हो गया तब इन चारों वेदों को पुस्तकबद्ध कर दिया जो अभी तक चलते आ रहे हैं । इस प्रकार हम देखते हैं कि सृष्टि के आदि से मनुष्य-मात्र के कल्याण के लिए वेदों का ज्ञान देने वाला ईश्वर सर्वप्रथम सद्गुरू हुआ । फिर ब्रह्मा उन वेदों को कण्ठस्थ करके आम जनता को सुनाते रहे इसलिए दूसरे सद्गुरू ब्रह्मा हुए । तत्पश्चात् त्रेता में रामायण काल में हमें दो सद्गुरू दिखाई देते हैं जिनके नाम हैं वशिष्ठ व विश्वामित्र जिन्होंने रावण, कुम्भकरण जैसे बलशाली व अन्यायी राक्षसों का संहार करने के लिए एक योजनाबद्ध तरीके से श्रीराम और लक्ष्मण को राजा दशरथ से लेकर उन्हें धनुर्विद्या तथा अन्य विद्याएँ सिखाई जिससे वे रावण को उसके पूरे परिवार सहित मारने में सफल हुए जिससे आम जनता को सुखी बनाया और ऋषि-मुनियों के यज्ञों को अपवित्र होने से बचाया । इसलिए ये भी सद्गुरू की श्रेणी में आते हैं। फिर हम जब आगे बढ़ते हैं तो द्वापर में महाभारत के समय दो गुरू दिखाई देते हैं । गुरू द्रोण और गुरु कृपाचार्य पर इनको हम सद्गुरू की श्रेणी में नहीं गिनते क्योंकि इन्होंने अपने स्वार्थ के लिए अपने कर्त्तव्य को त्याग कर पापी दुर्योधन का साथ देकर अधर्म का काम किया । तत्पश्चात् भारत के इतिहास को जब हम सूक्ष्म दृष्टि से अवलोकन करते हैं तो चन्द्रगुप्त मौर्य के सद्गुरू चाणक्य का नाम आता है जिसने चन्द्रगुप्त जैसे योग्य बच्चे को सुशिक्षित व शस्त्र विद्या में निपुण करके एक अच्छा योद्धा बनाकर, पापी राजा महानन्द का वध करवाकर, चन्द्रगुप्त को राजा बनाया और जनता को सुखी बनाया। इसके बाद हम आगे बढ़ते ह तो शेर शिवाजी के सद्गुरू रामदास पर हमारी दृष्टि पड़ती है जिन्होंने शेर शिवाजी को युद्ध विद्या में निपुण करके औरंगजेब जैसे पापी बदशाह के राज्य को नष्ट करवाया।

फिर हम आगे चलते हैं तो हमारी दृष्टि उस महान् सद्गुरू चक्षुविहीन स्वामी बिरजानंन्द पर पड़ती है जिसने अपने योग्य शिष्य बाल ब्रह्मचारी स्वामी दयानन्द को तीन वर्ष अपनी गोद में रखकर उसको वेदों की कुन्जी प्रदान की जिससे महर्षि दयानन्द ने, जो उस समय आचार्य सायण व उव्वट द्वारा वेदों के जो गलत और अश्लील भाष्य किये थे उनको गलत साबित करके, वेदों के सही भाष्य करके विश्व में वेदों का प्रकाश किया। महर्षि दयानन्द ने न केवल वेदों का सही भाष्य ही किया बल्कि अपने सद्गुरू बिरजानन्द को गुरू दक्षिणा के रूप में वचन दिये थे उनको पूरी उम्र पालन करते हुए विश्व में जो अज्ञान के कारण अन्धविश्वास व पाखण्ड का बोलबाला था उसको रोकने की किसी में हिम्मत नहीं थी, उस समय देव दयानन्द ने अपनी जान को जोखिम में डालकर वेदों के सही अर्थ बतलाकर उस अन्धविश्वास व पाखण्ड को मिटाया। और दुःखियों, असहायों व निर्बलों का सहारा बने। गाय की चीत्कार को सुना और विधवाओं के आँसू पोंछे तथा आजादी का शंखनाद फूँका। इस प्रकार देश में नव जागृति का संचार किया।

महर्षि दयानन्द नव जागरण के पुरोधा कहलाए जाते हैं। जब देव दयानन्द अपने सद्गुरू विरजानन्द की कुटिया छोड़कर अपने कार्यक्षेत्र में उतरे, उस समय देश की स्थिति बड़ी ही नाजुक व भयावह थी। महाभारत के भीषण युद्ध में सभी विद्वान्, योद्धा, आचार्य, पुरोहित आदि के मारे जाने से वेद ज्ञान प्रायः लुप्त हो गया था जिससे देश में अज्ञान व अविद्या, के फैलने से अन्धविश्वास व पाखण्ड का बोलबाला हो गया था। जाति कर्म से न मानकर जन्म से मानी जाने लगी थी। स्वार्थी पण्डितों ने अपना पेट भरने के लिए अनेक मत-मतान्तर चला दिये थे, जिससे कम पढ़े-लिखे व अविद्वान् भी विद्वान् समझे जाने लगे थे। ईश्वर की सच्ची उपासना जो संध्या, हवन, सत्संग व अष्टांग योग है, उनको छोड़कर उन स्वार्थी अधकचरे पण्डितों ने राम और कृष्ण को ईश्वर का अवतार मानकर उनकी तथा अन्य बनावटी व निरर्थक देवी-देवताओं की मूर्त्ति बनाकर उनकी ही पूजा करवाने लगे थे। और उसी को ही मोक्ष प्राप्ति का मार्ग बताया जाने लगा था। कृष्ण का अश्लील व भद्दा चित्र का वर्णन करके देश में अश्लीलता का ताण्डव नृत्य हो रहा था। ऐसी स्थिति में देव दयानन्द ने एक सद्गुरू और एक अच्छे वैद्य के रूप में वेदों का पुनः प्रकाश करके देश को नई दिशा प्रदान की जिससे देश में नव जागृति आई और वेदों के प्रकाश से प्रकाशित होकर देश पुनः उन्नति व समृद्धि की ओर अग्रसर हुआ। इसलिए देव दयानन्द जिसने देश को सही मार्ग पर चलना सिखाया और अन्धकार से प्रकाश की ओर ले जाने के लिए 'वेदों की ओर लौटो' का आह्वान किया जिससे देश में नव चेतना आई, इसलिए देव दयानन्द को हम सच्चा गुरू कहें तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। इसीलिए महर्षि अरविन्द ने कहा था कि

मैं हिमालय की अनेक चोटियाँ देख रहा हूँ जिनके ऊपर देश के महापुरुष बैठे हुए हैं।
जो चोटी सब से ऊँची है, उसके ऊपर महर्षि देव दयानन्द बैठे दिखाई दे रहे हैं॥

किसी कवि ने ठीक ही कहा है :-

सौ बार जन्म लेंगे, सौ बार फनां होंगे,
एहसान दयानन्द के, फिर भी न अदा होंगे।

गोविन्दराम आर्य एण्ड सन्स, १८० महात्मा गान्धी रोड (दो तल्ला)
कोलकत्ता-७००००७ फोन - २२१८३८२५ (०३३)
नया फोन- ८२३२०२५५९०, ९८३०१३५७९४

श्री गोविन्दराम हासानन्द जी

आर्य समाज कलकत्ता से कुछ-न-कुछ साहित्यिक कार्य होता ही रहा है । यहाँ एक विशेष साहित्यिक संस्था प्रकाशक के रूप में पनप उठी, जिसका साहित्य की दृष्टि से आर्य समाज कलकत्ता के इतिहास में एक महत्वपूर्ण स्थान है । आज आर्य जगत के सुप्रसिद्ध प्रकाशक और पुस्तक-विक्रेता 'गोविन्दराम हासानन्द' संस्था का आरम्भ आर्य समाज कलकत्ता के इतिहास में महत्वपूर्ण है । गोविन्दरामजी आर्य समाज कलकत्ता के पुस्तकाध्यक्ष और मन्त्री के पदों पर बहुत दिनों तक सुशोभित रहे हैं । इसी काल में इन्होंने साहित्यि सेवा का कार्य आरम्भ किया था । यह कलकत्ता का लघु बीज विशाल वटवृक्ष के रूप में इस समय दिल्ली में अपनी छाया के लिए, आर्य जगत् में सुप्रसिद्ध है ।

श्री गोविन्दरामजी का जन्म संवत् १९४३ विक्रमी में सिन्ध प्रान्त में शिकारपुर में हुआ था । पैतृक परम्परा से ये बल्लभाचार्य सम्प्रदाय के वैष्णव थे । परिवार में धार्मिक गोभक्त वातावरण था । इनके पिता श्री हासानन्दजी बड़े गोभक्त थे । इनके पिताजी सन् १८९९ ई० में कलकत्ता आ गये । इस प्रकार गोविन्दरामजी कलकत्ता में अपने व्यापार के सिलसिले में आये । सन् १९०३ ई० में श्री हासानन्दजी अपने व्यापार से लगभग तटस्य से होकर गौरक्षा के कार्य में लग गये । इस समय गोविन्दरामजी की आयु १७ वर्ष की थी ।

आर्य समाज से सम्पर्क :

गोविन्दराम जी अपना व्यवसाय करते हुए कुछ आर्य समाजी मित्रों के सम्पर्क में आये । इन मित्रों के सम्पर्क में गोविन्दरामजी का झुकाव आर्य समाज की ओर हो गया । कट्टर वल्लभाचार्य परिवार में नवयुवक पुत्र का आर्य समाजी संस्कार पर्याप्त क्षोभ का कारण बना । इनकी माताजी का तो आगे ही देहान्त हो गया था । इनके पिताजी श्री हासानन्द जी और इनकी विमाता जी गोविन्दराम जी से बहुत असन्तुष्ट रहने लगे । पर गोविन्दरामजी की आर्य सामाजिक निष्ठा अपनी जगह पर बहुत दृढ़ थी । गोविन्दरामजी ने उस समय की अपनी प्रतिक्रिया को स्वयं लिखा है :-

''ज्यों-ज्यों माता-पिता विरोध करते गये, मेरा आर्य समाज के प्रति प्रेम बढ़ता गया । मेरे माता-पिता कट्टर वैष्णव व मूर्ति-पूजक थे । जब भी किसी आर्य समाजी मित्र के साथ वे मुझे देखते थे तब तुरन्त ही डाँट-फटकार करने लगते थे । कई बार मारपीट भी मुझे सहन करनी पड़ जाती थी । परन्तु धर्म का सम्बन्ध तो आत्मा से है, शरीर से नहीं । माता-पिता की डाँट-फटकार और मारपीट से मेरा आर्य समाज से प्रेम घटने के स्थान पर बढ़ता ही गया । अन्त में मुझे घर से निकाल दिया था ।''

गोविन्दरामजी की आर्य समाजी निष्ठा बढ़ती ही गयी । इन्होंने लाभ भी कमाया और घाटा भी उठाया । जीवन के इस उतार-चढ़ाव के समय सिन्ध प्रदेश के ही एक आर्य समाजी श्री गोकुलचन्द्रजी से इनकी मित्रता हो गयी और दोनों ने मिलकर **''गोकुलचन्द्र गोविन्दराम''** नाम से स्वदेशी कपड़े की दूकान बहूबाजार में कर ली । यह दूकान अच्छी चली और इसी दूकान पर आर्य समाज का साहित्य भी रखने और बेचने लगे । उस समय सत्यार्थ प्रकाश और ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका आदि ग्रन्थों का बंगला अनुवाद तो नहीं सुलभ था, किन्तु **''गोकुलचन्द्र गोविन्दराम''** के कैशमेमो के पीछे इन पुस्तकों

का विज्ञापन वे दोनों मित्र बंगला में छपवा दिया करते थे । इस प्रकार आर्य साहित्य की चर्चा और प्रचार का सुन्दर-सा उपक्रम बन गया । गोविन्दरामजी लगन शील आर्य समाजी तो थे ही, बाहर से आने वाले विद्वानों का आतिथ्य भी अपने यहाँ करते थे । पंजाब प्रतिनिधि सभा के पं० पूर्णानन्दजी उस समय कलकत्ता आये थे और ३-४ मास तक इन्हीं के यहाँ भोजन करते रहे थे । पंडितजी के इस पारिवारिक सम्पर्क से गोविन्दरामजी की पत्नी की भी आर्यसमाजी निष्ठा दृढ़ हो गयी ।

श्री गोविन्दरामजी आरम्भ से ही आर्यसमाज कलकत्ता के सभासद् थे । ऐसी लगन और सेवाभाव के व्यक्ति आर्यसमाज के संगठन में शीघ्र ही अपनी महत्वपूर्ण भूमिका बनाकर लोकप्रिय हो गये । इनकी साहित्यिक अभिरुचि तो थी ही, ये आर्यसमाज कलकत्ता के कई वर्षो तक पुस्तकाध्यक्ष रहे । ये आर्यसमाज कलकत्ता के मन्त्री भी कई वर्षो तक रहे थे । आर्यसमाज में कार्य करते इन्हें दृढ़ विश्वास हो गया कि मौखिक प्रचार के साथ ही साहित्य-प्रचार की ओर भी ध्यान देना अति आवश्यक है । फलतः इन्होंने आर्यसमाज कलकत्ता के बिक्री विभाग को चालू किया ।

आर्यसमाज कलकत्ता का पुस्तकालय और बिक्री विभाग :

इतिहास की दृष्टि से यह एक महत्वपूर्ण घटना है जिसे हम वेदप्रकाश के उपर्युक्त अंक के आधार पर दे रहे हैं । श्री गोविन्दरामजी ने अपने अन्य ३ मित्रों के सहयोग से ५०-५० रु० के चार हिस्से मिला कर।२०० रु० एकत्र कर लिये । इसी २०० रु० की पूंजी से आर्यसमाज कलकत्ता के आधीन एक पुस्तकालय बिक्री विभाग स्थापित किया गया । इस प्रकार कलकत्ता में आर्यसाहित्य की बिक्री की एक प्रभावशाली योजना बन गयी । कलकत्ता हिन्दी अंचल से बहुत दूर है । यहाँ हिन्दी पाठकों की संख्या भी अधिक न थी और आर्यसाहित्य को व्यावसायिक रूप से चलाना कठिन था । इन सब प्रसंगों पर विचार करने से गोविन्दरामजी का यह कार्य बहुत महत्वपूर्ण प्रमाणित हुआ । इन्होंने प्रचार की दृष्टि से ओ३म्, वेदमन्त्र, नमस्ते, स्वागतम् आदि साहित्यिक कार्य के मोटो भी छपवाये । स्वामी दयानन्द एवं अन्य आर्य नेताओं के चित्र भी छपवाये । इन सबका बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा ।

सत्यार्थ प्रकाश का सुन्दर-सस्ता संस्करण :

सन् १९२५ ई० में मथुरा में श्रीमद्दयानन्द जन्म शताब्दी महोत्सव मनाया जाने वाला था । आर्यजगत् के इतिहास में यह त्याग बलिदान और उल्लास का युग था । उमंग और उत्साह से आर्यसमाज झूम उठी थी । श्री गोविन्दरामजी उस समय आर्यसमाज कलकत्ता के पुस्तकाध्यक्ष थे और बिक्री विभाग के भी यही अध्यक्ष थे । इनके मस्तिष्क में महर्षि के प्रति एक दीवानापन समा गया था । ऋषि के अमर ग्रन्थ **'सत्यार्थ प्रकाश'** का एक सस्ता-सुन्दर संस्करण प्रकाशित करने के लिए ये ललक उठे । उस समय वैदिक यन्त्रालय ने सत्यार्थ प्रकाश का मूल्य एक रुपया से बढ़ा कर ढाई रुपये करने की घोषणा कर दी थी । उससे गोविन्दरामजी को और भी ठेस लगी । उन्होंने कलकत्ता में प्रकाशन की व्यवस्था पर विचार किया और इनके अनुमान से सत्यार्थ प्रकाश का प्रकाशन व्यय बारह आने प्रति पुस्तक पड़ता था । अतः एक रुपया प्रति बेचने में हानि की सम्भावना न थी । स्वामी श्रद्धानन्दजी की प्रेरणा से और उनके परामर्श से गोविन्दरामजी ने ६ हजार प्रतियाँ सत्यार्थ प्रकाश की छपवा दी और लागत मूल्य एक रुपया में बेच दिया । तीन महीने के स्वल्प काल में ६ हजार प्रतियों का बिकना एक परम उत्साह की बात थी । गोविन्दरामजी और उनकी कार्यस्थली आर्यसमाज कलकत्ता सत्यार्थ प्रकाश

के प्रचार के इतिहास में इस दृष्टि से उस समय एक प्रचारात्मक भूमिका निभाते दिखाई पड़ रहे हैं। वैदिक यन्त्रालय ने भी सत्यार्थ प्रकाश का मूल्य एक रुपया कर दिया और फिर तो सस्ते संस्करणों की ऐसी बाढ़ आयी कि सम्भवतः चार आने प्रति के मूल्य में भी सत्यार्थ प्रकाश का संस्करण निक़ला था। इन कार्यों के पीछे श्री गोविन्दरामजी और कलकत्ता आर्यसमाज की अपनी भूमिका अवश्य ही महत्वपूर्ण है।

वेदतत्व प्रकाश का प्रकाशन :

श्री गोविन्दराम जी ने आर्यसमाज कलकत्ता के साथ कार्य करते हुए साहित्य के कई महत्वपूर्ण प्रकाशन कर दिये थे। उनमें एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रकाशन है **'वेद तत्त्व प्रकाश'**-ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका का टिप्पणी सहित प्रकाशन। जिस समय पं० अयोध्या प्रसाद जी शिकागो सम्मेलन में भाग लेने अमेरिका चले गये उस समय पं० सुखदेवजी विद्यावाचस्पति कलकत्ता आर्यसमाज के आचार्य नियुक्त किये गये। पं० सुखदेवजी विद्यावाचस्पति दर्शनभूषण एवं आदर्श विद्वान् थे। श्री गोविन्दरामजी ने उनसे ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका का संस्करण सम्पादित करने का अनुरोध किया। यह संस्करण श्री गोविन्द राम जी ने सन् १९९२ विक्रमी में २२०० प्रतियों का प्रकाशित किया। इसके प्रकाशक तथा मुद्रक के रूप में गोविन्दराम हासानन्द वैदिक प्रेस, ८०, मुक्ताराम बाबू स्ट्रीट, कलकत्ता का उल्लेख है। पं० सुखदेवजी ने ऋग्वेदादि भाष्य भूमिका के इस संस्करण में कई तरह के उपयोगी कार्य किये, जिससे परवर्ती प्रकाशका को लाभ हुआ। इस संस्करण में पं० सुखदेवजी ने उपयोगी टीका-टिप्पणियाँ दी ह और ग्रन्थ के अंत में अकारादि क्रम से प्रमाण-सूची भी जोड़ दी है।

कहीं सुस्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता है, किन्तु श्री गोविन्दरामजी आर्यसमाज की सेवा करते हुए आर्यसाहित्य के प्रकाशन और विक्रय को अपनी आजीविका के रूप में अपना चुके थे। कलकत्ता रहते हुए इन्होंने अन्य जिन ग्रन्थों का प्रकाशन किया उनकी संक्षिप्त-सी सूची निम्न प्रकार है :-

(१) **संस्कार प्रकाश-** संस्कारविधि का यह संस्करण पं० रामगोपाल विद्यालंकार ने तैयार किया था। समस्त मन्त्रों का भावार्थ हिन्दी में छापा गया है।

(२) **आर्य पथिक लेखराम-** स्वामी श्रद्धानन्दजी द्वारा लिखित आर्य पथिक श्री लेखरामजी का जीवन चरित्र

(३) **वीर संन्यासी श्रद्धानन्द जी -** लेखक पं० रामगोपाल जी विद्यालंकार

(४) **श्री मद्दयानन्द प्रकाश -** श्री स्वामी सत्यानन्द सरस्वती द्वारा लिखित ऋषि दयानन्द की जीवनी

(५) **दर्शनानन्द ग्रन्थमाला -** प्रथम भाग व द्वितीय भाग

(६) **विधवा विवाह -** पं० ईश्वरचन्द्रजी विद्यासागर की बंगला पुस्तक का हिन्दी अनुवाद

(७) **वैदिक सिद्धान्त व्याख्यानमाला -** स्वामी नित्यानन्दजी के व्याख्यानों का संग्रह

(८) **पतिता की शुद्धि शास्त्रसम्मत है -** लेखक पं० शिवकुमारजी शास्त्री

(९) **ईश और केन उपनिषदों का भाष्य -** पं० पूर्णानन्दजी महोपदेशक

(१०) **उपासना योग व भक्तिमार्ग -** गुटका

(११) वैदिक धर्म शिक्षा

(१२) गृहस्थ कर्तव्यशिक्षा

(१३) वेद और संसार के मतमतान्तर - पं० सुरेन्द्र जी शर्मा काव्यतीर्थ

(१४) पंच महायज्ञ विधि

(१५) गो-करुणानिधि

(१६) आर्य समाज का परिचय – स्वामी अनुभवानन्दजी द्वारा लिखित

(१७) पौराणिक ढोल की पोल

(१८) वीर बच्चों की कहानियाँ

(१९) वैष्णव मत का संक्षिप्त इतिहास और गोसाइयों की लीला

(२०) इस्लाम कैसे फैला - लेखक पं० अयोध्या प्रसादजी बी०ए०, आर्य मिशनरी, आचार्य आर्यसमाज कलकत्ता

(२१) इस्लाम का परिचय

(२२) इस्लाम के विश्वासों पर विचार-दृष्टि

(२३) पादरी साहब और भादू जाट का शास्त्रार्थ - स्वामी दर्शनानन्द जी

(२४) बाल-शिक्षा - प्रथम भाग व द्वितीय भाग - स्वामी दर्शनानन्द जी

(२५) प्राणायाम विधि - महात्मा नारायण स्वामी

(२६) सत्यनारायण की प्राचीन कथा

इन सब आर्य-प्रकाशनों का श्रेय श्री गोविन्दराम जी को है। ये सन् १९३९ ई० म कलकत्ता से दिल्ली चले गये।

श्री गोविन्दराम जी का वैदिक प्रेस जो पीछे ८०, मुक्ताराम बाबू स्ट्रीट में चला गया, कभी कन्या विद्यालय और आर्यसमाज मन्दिर के साथ २० कार्नवालिस स्ट्रीट में था। इस दृष्टि से यह महत्वपूर्ण लगता है कि आर्यसमाज कलकत्ता ने श्री गोविन्दराम जी के वैदिक प्रेस को पर्याप्त अपनाया था। यों तो गोविन्दराम जी सन् १९३१-३२ ई० आदि के वषो म आर्यसमाज कलकत्ता के मन्त्री थे और उस समय पं० सुरेन्द्र जी शर्मा 'गौड़' आर्यसमाज कलकत्ता के प्रचार मन्त्री थे। इस प्रकार पं० सुरेन्द्र जी शर्मा के संस्मरण विश्वसनीय हैं। पं० सुरेन्द्र जी शर्मा 'गौड़' ने अपने संस्मरण में लिखा है –

''सर्वप्रथम श्री महाशय गोविन्दराम हासानन्द का परिचय मुझे सन् १९३० ई० में कलकत्ता में हुआ। ब्रह्मा से लौटने पर आर्यसमाज, कार्नवालिस स्ट्रीट, कलकत्ता के सदस्या ने वहा रोक लिया। आर्यसमाज के आर्यकन्या विद्यालय के भवन २०, कार्नवालिस स्ट्रीट के द्वार के ऊपर के कमरे में (जहाँ कभी सरदार भगत सिंह जी आकर ठहरे थे) म तथा मेरे साथ के कमरे में महाशय गोविन्दराम जी रहते थे। नीचे उनका वैदिक प्रेस भी था। यह सन् १९३० ई० की घटना है।''

श्री गोपालजी गिरधर के संस्मरणों के आधार पर सन् १९२६ ई० में श्री गोविन्दरामजी का वैदिक प्रेस २४, मन्दिर स्ट्रीट में था। यह जकरिया स्ट्रीट मुसलमानी पाढ़ा और मस्जिद के समीप ही जगह है। सन् १९२६ ई० में अप्रैल मास म आर्यसमाज कलकत्ता के वार्षिकोत्सव के अवसर पर आर्यसमाज के नगर-कीर्तन पर दीनू मियाँ की मस्जिद, हरिसन रोड से तैयारी के साथ हमला किया गया। श्री

गोपालजी गिरधर स्वयं इस नगर-कीर्तन में सम्मिलित थे । वे लिखते है कि सन्.१९२६ ई० में उस समय भी गोविन्दरामजी जकरिया स्ट्रीट के पास २१, मन्दिर स्ट्रीट में रहते थे और वहा उनका छापाखाना भी था । मुसलमानों ने इनके घर पर भी हमला किया था और छापाखाना को काफी क्षति पहुँचायी थी । श्री गोविंदरामजी इस घटना के बाद २०, कार्नवालिस स्ट्रीट में अपना परिवार और प्रेस लेकर आ गये थे । इसी के पश्चात् वैदिक प्रेस मुक्तराम बाबू स्ट्रीट में गया । इस वर्णन का यहाँ इतना-सा अभिप्राय है कि आर्यसमाज कलकत्ता और आर्यकन्या विद्यालय सन् १९२६ ई० के झगड़े के बाद शरणार्थी शिविर बन गये थे जिनमें जकरिया स्ट्रीट, मन्दिर स्ट्रीट और आसपास के हिन्दुओं ने आकर शरण ली थी । २४, मन्दिर स्ट्रीट का भवन दानवीर बिड़ला परिवार का था । प्राय: सभी आवासहीन व्यक्ति बिड़लाजी की दानशीलता और सहायता के पात्र बने थे और वे सब आर्यसमाज और आर्यकन्या विद्यालय में आकर टिके थे । कन्या विद्यालय का भवन तो बिड़ला परिवार की उदारतापूर्ण दानशीलता का प्रतीक है ही, उस समय आर्यसमाज कलकत्ता ने इन शरणार्थियों की प्रशंसनीय सेवा की थी ।

-आर्य समाज कलकत्ता के शतवर्षीय इतिहास स

संस्कार विधि पर आधारित टेलीविज़न धारावाहिक लिखवाने का निर्णय

आर्य समाज कलकत्ता ने महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा रचित पुस्तक 'संस्कार विधि' पर टी० वी० के लिये एक धारावाहिक लिखवाने का निर्णय लिया है, जिससे हमारी युवा पीढ़ी को महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा बताए गए संस्कारों की सही-सही जानकारी हो सके । जो भी विद्वान् या विद्वानों का समूह 'संस्कार विधि' पर धारावाहिक लिखने को इच्छुक हैं, वे सभी विद्धान् आर्य समाज कलकत्ता से सम्पर्क करें । धारावाहिक में महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा बताए गये सिद्धांतों को मनोरंजक ढंग से दिखाया जाएगा जिससे यह सभी उम्र के लोगों के लिये रुचिकर हो । सिद्धांतों से किसी प्रकार का समझौता नहीं होगा । सभी संस्कार विस्तृत रूप में शंका समाधान सहित लिखा जाए । धारावाहिक १०८ कड़ियों या इससे अधिक की हो । इस धारावाहिक पर आर्यजगत् के ५ विद्वानों की समिति इसका निर्णय लेगी । सभी विद्वानों को वर्तमान समयानुसार पारिश्रमिक दिया जाएगा। इस धारावाहिक पर आर्य समाज कलकत्ता का सर्वाधिकार सुरक्षित रहेगा । कॉपी राईट भी आर्य समाज कलकत्ता का ही होगा ।

सम्पर्क - दीपक आर्य (मन्त्री) - 8961774940
सुरेश कुमार अग्रवाल - 8240241178
9831847788

भवदीय
आर्य समाज कलकत्ता
दीपक आर्य
मन्त्री

महाभारत काल के बाद महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने ही सत्य ईश्वर की अनुभूति करायी

- पं० उम्मेद सिंह विशारद

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम व सप्तम समुल्लास में ईश्वर की अनुभूति करायी व अन्य समुल्लास में संकेत किया कि महाभारत काल से एक हजार वर्ष पूर्व तक समाज में वेदों का पठन पाठन था, तथा वेदानुसार संस्कार होते थे, और वैदिक संस्कृति, व सभ्यता का ही चलन था । सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम समुल्लास के प्रारम्भ में ओउम् यह ओंकार शब्द परमेश्वर का सर्वोत्तम नाम है, क्योंकि इसमें जो अ, उ और म् तीन अक्षर मिलकर एक (ओ३म्) समुदाय हुआ है, इस एक नाम से परमेश्वर के बहुत नाम आते हैं । जैसे - अकार से विराट अग्नि और विश्वादि । उकार से हिरण्यगर्भ वायु और तैजसादि, मकार से ईश्वर आदित्य और प्राज्ञादि नामा का वाचक और ग्राहक है । उसका ऐसा ही वेदादि सत्य शास्त्रों में स्पष्ट व्याख्यान किया है कि प्रकरणानुकूल ये सब नाम परमेश्वर के ही ह । ''ओ३म्'' यह तो केवल परमात्मा ही का नाम है ।

ततो विराडजायत विराजो ओधपूरूष: – ।
श्रोत्राद्वायुश्च प्राणश्च मुखादग्निरजायत – ।। यजु:अ० ३

वेदों के व तैत्तिरीयोपनिषद के प्रमाणों में विराट, पुरूष, देव, आकाश, वायु, अग्नि, जल, भूमि, आदि नाम लौकिक पदाथो के होते ह, क्योंकि जहां-जहां उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय, अल्पज्ञ जड: छश्य आदि विशेषण भी लिखें हो वहां-वहां परमेश्वर का ग्रहण नहीं होता । वह उत्पत्ति आदि व्यवहारों से पृथक है, और उपरोक्त मन्त्रों में उत्पत्ति आदि व्यवहार है, इसी से यहां विराट आदि नामों से परमात्मा का ग्रहण न हो के संसारी पदार्थो का ग्रहण होता है । किन्तु जहां-जहां सर्वज्ञादि विशेषण हों वहीं-वही परमात्मा और जहां-जहां इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख-दु:ख और अल्पज्ञादि विशेषण हो वहां-वहां जीव का ग्रहण होता है ऐसा सर्वत्र समझना चाहिए ।

क्योंकि परमेश्वर का जन्म मरण कभी नहीं होता, इससे विराट आदि नाम और जन्मादि विशेषणों से जगत् के जड़ और जीवादि पदार्थो का ग्रहण करना उचित है, परमेश्वर का नहीं । (सत्यार्थ प्रकाश प्रथम सम्मुलास)

ऋचो अक्षरे परमे व्योमन्यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदु: ।
यसतन्न वेद किमृचा करिष्यति य इत्तद्विदुस्त इमे समससते । (ऋ०)

अर्थात:- (प्रश्न) वेदां में अनेक देवता लिखे है उसका क्या अभिप्राय है ?

(उत्तर) देवता दिव्य गुणों से युक्त होने के कारण कहाते हैं जैसे कि पृथ्वी परन्तु इसको कहीं ईश्वर वा उपासनीय नहीं माना है । देखो इस मंत्र में कि जिसमें सब देवता स्थित हैं, वह जानने और उपासना करने योग्य ईश्वर है । यह उनकी भूल है जो देवता शब्द से ईश्वर का ग्रहण करते हैं । परमेश्वर देवों का देव होने से महादेव इसलिये कहता है कि वही सब जगत की उत्पत्ति स्थिति, प्रलयकर्त्ता, न्यायाधीश, अधिष्ठाता है ।

(ऋचो अक्षरे) अर्थात जो सब दिव्य गुण, कर्म स्वभाव विद्यायुक्त और जिसमें पृथ्वी, सूर्यादि लोक स्थित है, और जो आकाश के समान व्यापक सब देवों का देव परमेश्वर है **उसको जो मनुष्य न जानते न मानते और उसका ध्यान नहीं करते वे नास्तिक मन्दमति सदा दु:ख सागर में डूबे ही रहते ह । सर्वदा उसी को जानकर सब मनुष्य सुखी होते हैं ।**

ईशावास्यमिदं सव यत्किच्य जगत्याँजगत ।
तेन त्यक्तेन भुन्जीथा मागृध:कस्य स्विद्धनम ।। (यजुर्वेद)

अर्थात - हे मनुष्य ! जो इस संसार में जगत है, उस सब में व्याप्त होकर जो नियन्ता है वह ईश्वर कहाता है । उससे डरकर तू अन्याय से किसी के धन की आकांक्षा मत कर । उस अन्याय के त्याग

और न्यायचरणरूप धर्म से अपने आत्मा से धर्म को भोग ।

अहमिन्द्रों न परा जिग्य इध्दंन न मृत्यवे २ वतस्थे कदाचन-।

सोममिन्मा सुन्वन्तो याचता वसु न मे पूख: सख्ये रिषाधन- ।।(ऋ०वे०)

अर्थातः मैं परमैश्वर्यवान् सूर्य के सदृश सब जगत का प्रकाशक हूँ । कभी पराजय को प्राप्त नहीं होता और न कभी मृत्यु को प्राप्त होता हूँ । मैं ही जगत रूप धन का निर्माता हूँ । सब जगत की उत्पत्ति करने वाले मुझी को ही जानो । हे जीवों ऐश्वर्य प्राप्ति के यत्न करते हुए तुम लोग विज्ञानादि धन को मुझ से मांगो और तुम लोग मेरी मित्रता से अलग मत होओ ।

हिरण्यगर्भ: समवर्त्तताग्रे भूतस्य जात: पतिरेक आसीत ।

स दाधार पृथिवी द्यामु तेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ।। (यजुर्वेद)

अर्थातः हे मनुष्यो ! जो सृष्टि से पूर्ण सूर्यादि तेज वाले लोको का उत्पत्ति स्थान आधार और जो कुछ उत्पन्न हुआ था और होगा उसका स्वामी था, है और होगा । वह पृथ्वी से लेके सूर्यलोक पर्यन्त सृष्टि को बना के धारण कर रहा है उस सुख स्वरूप परमात्मा ही की भक्ति जैसे हम करें वैसे तुम लोग भी करो । (सत्यार्थ प्रकाश सप्तम समु०)

स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविर शुद्धमपाप विद्धम । (यजुर्वेद)

ईश्वर की स्तुति-वह परमात्मा सब में व्यापक शीघ्रकारी और अनन्त बलवान जो शुद्ध सर्वज्ञ, सबका अन्तर्यामी, सर्वोपरि, विराजमान, सनातन, स्वंयसिद्ध परमेश्वर अपनी जीवरूप सनातन आदि प्रजा को अपनी सनातन विद्या से यथावत अर्थो का बोध वेद द्वारा कराता है । यह सगुण स्तुति अर्थात जिस-जिस गुण से सहित परमेश्वर की स्तुति करना वह सगुणः (अकाय) अर्थात कभी शरीर धारण व जन्म नहीं लेता । (सप्तम समु०)

प्रेम व समर्पण का मार्ग ही ईश्वर से साक्षात्कार की अनुभूति करा सकता है ।

हम प्रायः कहते हैं कि हमें ईश्वर की प्राप्ति के लिये ईश्वर का चिन्तन करना चाहिए । किन्तु बिना अनुभव के हम चिन्तन नहीं कर सकते हैं । मन ही सर्वाधिक तीव्रगामी है । विचार ही मन की भक्ति हैं किन्तु जहाँ मन की सीमा समाप्त होती है वहाँ से परमात्मा की सीमा शुरू होती है । अर्थात जब संसार के भौतिक विचार भक्ति से उपराम होने पर ही उस ईश्वर की अनुभूति होती है । उपनिषदों में कहा गया है कि ईश्वर ने सम्पूर्ण सृष्टि की रचना की और सारी कर्मेंद्रियों का रुख बाहर की ओर रखा और स्वयं हमारे भीतर हमारी हृदय गुहा में छप गया । हमारी सारी उपलब्धियाँ बाहर से प्राप्त होती हैं । इसलिये हम ईश्वर को बाहर पाना चाहते हैं । इस प्रकार ईश्वर की ओर हमारी पीठ हो जाया करती है, हम भीतर को छोड़कर बाहर तलाश करते हैं । जो चीज हमारे जितनी निकट होती है, उसके होने का आभास उतना ही क्षीण होता है । और उसका पता तब चलता है जब वह चीज हमसे दूर हो जाती है । हमने ईश्वर को अपने भीतर होने का बोध खो दिया है । काश हमने कभी परमात्मा को खोया होता तो उसको खोज सकते थे । किन्तु जब हमने उसे खोजा ही नहीं तो उसे कैसे और कहां खोजें ।

इस सन्दर्भ में हमें एक यह बात याद रखनी चाहिए कि परमात्मा कोई व्यक्ति नहीं बल्कि एक प्रबल रचनात्मक शक्ति है जो अदृश्य है, उसकी शक्ति को ध्यान के जरिये निर्विचार होकर हम अपनी अंतर चेतना में अनुभव कर सकते हैं ।

श्रध्ये मान्य पाठक जी - यह तो महर्षि दयानन्द सरस्वती जी द्वारा रचित ग्रन्थों से किंचित मात्र ईश्वर की अनुभूति का संकेत मात्र किया है । ऋषिवर जी के पूर्ण ग्रन्थों को पढ़ने से ही पूर्ण रूप से ईश्वर की अनुभूति हो सकती है ।

वैदिक प्रचारक

गढ़ निवास मोहकमपुर

देहरादून उत्तराखण्ड

मो० - 9411512019

9557641800

पृष्ठ २ का शेषांश……

२. आर्य समाज कलकत्ता के पूर्व उपमन्त्री श्री शिवकुमार जायसवाल जी, सदस्य श्री विनोद कुमार जायसवाल जी (रायपुर निवासी) एवं पतञ्जलि योगपीठ के संरक्षक सदस्य श्री विजय कुमार जायसवाल जी की माता श्रीमती बेला देवी जायसवाल जी का निधन दिनांक १३ मई २०१८ को प्रात: काल लगभग ९० वर्ष की आयु में हो गया है। आर्य समाज कलकत्ता के दिनांक ०७/०५/२०१८ एवं २०/५/२०१८ के रविवारीय साप्ताहिक सत्संग पर एकत्रित समस्त आर्य जनों ने श्री रामनारायण सैनी एवं श्रीमती बेला देवी जायसवाल जी के निधन पर हार्दिक शोक एवं सम्वेदना प्रकट करते हुए परमपिता परमेश्वर से दिवगंत आत्मा की शान्ति एवं सद्गति तथा शोक सन्तप्त परिवार को वियोगजन्य दु:ख को सहन करने की क्षमता प्रदान करने के लिए प्रार्थना की।

आर्य स्त्री समाज कलकत्ता द्वारा भीषण गर्मी में आम रस एवं शीतल पेय का वितरण

पंडित नचिकेता भट्टाचार्य जी की प्रेरणा से आर्य स्त्री समाज की ओर से मई महीने में जब भीषण गर्मी पड़ती है आम पन्ना विगत २ वर्षों से वितरित किया जा रहा है। इस वर्ष भी २३ मई को आम पन्ना और लाल चना लगभग ६००लोगों में श्रीमती सुषमा अग्रवाल जी के विशेष सहयोग से तथा ३० मई को श्रीमती संतोष गोयल जी के विशेष सहयोग से लगभग ७५० लोगों को गुलाब शरबत वितरित किया गया। चंडीपुर आर्य समाज के बच्चों को आम और गुलाब शरबत भेजा गया। इन सभी कार्यक्रमों को सफल बनाने में हमारी सभी बहनों और माताओं का पूर्ण सहयोग रहा। आर्य समाज कलकत्ता के अधिकारियों का भी योगदान रहा। भविष्य में भी हम इसी तरह के कार्यक्रम और अधिक संख्या में कर सकें यही ईश्वर से हमारी प्रार्थना है।

द्वारा आर्य स्त्री समाज कलकत्ता

आर्य समाज कलकत्ता, १९ विधान सरणी कोलकाता - ६ के लिए श्री राजेन्द्र प्रसाद जायसवाल द्वारा प्रकाशित तथा एशोशियेटेड आर्ट प्रिण्टर्स, ७/२, विडन रो, कोलकाता-६ में मुद्रित। मो. : ९८३०३७०४६३